स्थानकवासी जैन समाज की अनुपम संस्था
स्थानकवासी श्रमण

☐ जवाहरलाल मूणोत
अध्यक्ष—अ० भा० स्था० जैन कॉन्फ्रेंस

☐

इस सच्चाई को समझने के लिए कोई समाजशास्त्री अथवा मनोवैज्ञानिक होने की जरूरत नहीं है कि जन-साधारण के सर्वसामान्य धर्म की व्याख्या में, जितना महत्त्व धर्म के तात्त्विक विवेचन, धर्म के दर्शन और उसकी संस्कृति का है, उससे कहीं ज्यादा महत्व, धर्म के बाह्य स्वरूप और उसके कलेवर का है। हकीकत तो यह है कि आम आदमी के लिए, विद्वानों की दार्शनिक बहसें, तार्किकों के शास्त्रार्थ और साहित्यकारों की मीमांसा बहुत कम मतलब रखती है। उसके लिए तो उसके धर्म का गहन तत्व, धर्म के बाहरी प्रतीक, पहिचान और कर्मकाण्ड द्वारा ही मन के भीतर उतरता है।

किसी ईसाई के लिए, एक क्रास (कूस) करुणा, प्रेम और शरणागति की भावना का सबसे प्रबल स्रोत है, आप क्रास के बदले में उनसे ईसाई दर्शन का अर्थ समझा नहीं पायेंगे। आम हिन्दू के लिए मन्दिर से बजती घण्टियाँ, आरती के ढोल और होम का धुँआ—उसके समस्त धार्मिक संस्कारों और आस्थाओं के आधारस्तम्भ हैं। मस्जिद की गुम्बद से पुकारते मुअज्जन की पुकार पर जैसे मुसलमान नमाज के लिए सिजदे में झुक जाता है या फिर मुहर्रम के ताबूत को देख-देखकर, मरसिये गा-गाकर रोने लगता है—उसके मजहब की पहिचान क्या आप इसलाम के एकेश्वरवाद से करने लगेंगे ?

मगर जो धर्म, बुनियादी रूप से अमूर्तिपूजक है, निराकारी हैं, उसके अनुयायियों के लिए वह बाहरी कलेवर, वह धर्म का मूर्तिमान स्वरूप क्या होता है, क्या हो सकता है ?

अमूर्तिपूजक जैनधर्म का सशरीरी प्रतीक—श्रमण

बहुत विविध है जैनधर्म का आयाम। बहुत विशाल शरीर है इसके इतिहास का। और इसके वर्तमान से कहीं ऊँचा, सुपुष्ट और मनोहारी है इसका इतिहास का वृतान्त। और इसी जैनधर्म का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण अंग है—इसका स्थानकवासी समाज—जो रूढ़िगत मूर्तिपूजा को नहीं मानता। लेकिन हम भूल न करें, जैन जगत में स्थानकवासी समाज, अपनी इस निजी विशेषता के बाद भी, हिन्दुओं का आर्यसमाज ही नहीं है।

अगर स्थानकवासी समाज का वर्तमान रूप दो-ढाई सौ बरसों से ज्यादा पुराना नहीं है तो यह प्रश्न उठ सकता है कि कहीं यह सुधारवादी आन्दोलन, कमी-बेशी आर्यसमाज-सा ही तो नहीं ? लेकिन हम जानते हैं, आर्यसमाज के इतने महत्वपूर्ण काम-काज और अर्थपूर्ण भूमिका के बावजूद, यह धर्म का रूप ले न पाया, केवल पढ़े-लिखे, नव-जागरण की पुरुष-पीढ़ी ही इसका अंगीकार कर सकी। आम जनता, विशेष रूप से महिलाओं ने इसे आत्म-सात् न किया। वह उनका धर्म न बन सका, केवल कुतूहल और आदर का सुधार भर रहा।

परन्तु, स्थानकवासी समाज की स्थिति तो बिलकुल भिन्न है। यह अमूर्तिपूजक धर्म, आज भी और पहिले भी, लाखों-लाखों नर-नारियों का निजी, अविच्छिन्न और समग्र भावनामय धर्म है। इसे केवल सुधारवादी आन्दोलन कहने की हिम्मत कोई भी कर नहीं सकेगा।

तब सवाल है, वह कौनसा रहस्य है जिसके कारण, स्थानकवासी जैन समाज, साफतौर पर मूर्तिपूजा से किनारा काट कर भी, इतना प्रबल जन-साधारण का धर्म बना हुआ है, प्रगति कर रहा है ? अन्य मूर्तिभंजक धर्मों (यथा—इस्लाम) से इसकी कोई तुलना नहीं क्योंकि इस धर्म की जो बुनियाद है, वहाँ मूर्तिपूजा को भी अत्यन्त महत्व-पूर्ण और ऐतिहासिक स्थान है, जैनधर्म की संस्कृति, सैकड़ों अनुपम, भव्य मन्दिरों और चित्रों में सुरक्षित है। और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

फिर भी, सुधार का यह जबरदस्त प्रवाह, केवल सुधारवाद की लहर न बनी रह कर, समग्र, सम्पूर्ण आम आदमी का धर्म है। इस चमत्कार के लिए कौन उत्तरदायी है ?

जबाब है—**स्थानकवासी श्रमण**। जैन साधु और जैन साध्वी की संस्था सचमुच बहुत गहन है। केवल इसी संस्था की स्थिरता के कारण, स्थानकवासी धर्म, एक ओर, बाहरी आडम्बर यथा—मन्दिर, पूजा-अर्चना आदि—से पूरी तरह मुक्त है लेकिन वहीं, श्रमण संस्था के कारण, लाखों नर-नारियों की भावनाओं को धार्मिक प्रतीक के द्वारा आलोकित करने की क्षमता रखता है। यों तो समस्त जैनधर्म के सभी साधु और साध्वी जन-जन में आदर और श्रद्धा पैदा करते हैं परन्तु—विशेष रूप से, स्थानकवासी समाज अपने श्रमणवृन्द का जिस उत्साह, आस्था, विश्वास, श्रद्धा और उल्लास से समादर करता है, वह निःसन्देह बेजोड़ है। चाहे चार्तुमास का अवसर हो या विहार का क्षण, व्याख्यान का प्रसंग हो या सेवा-शुश्रूषा का—स्थानकवासी श्रमण, धर्म का अन्तरंग और बहिरंग का संयुक्त प्रतीक बनता है। एक साथ ही, स्थानकवासी श्रमण, जैनधर्म के आदर्श—सम्यक्चारित्र का प्रतिमान है तो धर्म के सामान्य कलेवर का शारीरिक स्वरूप। श्रमण, धर्म के स्थूल और सूक्ष्म, सामान्य और विशिष्ट, जन-साधारण और आम श्रावक-श्राविका तथा दर्शन, तत्व-चिन्तन—सभी स्तरों पर—स्थानकवासी धर्म का वह अप्रतिम उदाहरण पेश करता है जिसकी तुलना सम्भव नहीं दीखती।

चरित-नायक श्री पुष्कर मुनिजी

प्रकट है कि जहाँ श्रमण, इतने विविध स्तरों पर, व्यापक रूप से समस्त धर्म के अन्तरंग और बहिरंग का प्रतिनिधित्व करता हो, वहाँ उसके प्रति आदर, श्रद्धा, विश्वास, आस्था और अनुराग भी, सामान्यतया अन्य साधुओं की तुलना में कई गुना बढ़ा-चढ़ा है। और इसीलिये, एक औसत जैनधर्मावलम्बी (यानि स्थानकवासी जिस तीव्रता से अपने श्रमण के प्रति समर्पित रहता है, उसी आतुरता और तत्परता से अपने श्रमण के शुद्धाचार पर किसी भी तरह की जरा-सी भी आँच सहन नहीं कर पाता।

स्थानकवासी श्रमण के अन्य पहलू पर भी गौर करिये। आम तौर पर, आत्म-कल्याण, किसी भी साधु के लिये अपना अभीष्ट है, अपना पहला लक्ष्य है। यही आत्म-कल्याण की लगन उसे न केवल साधु बनने बल्कि साधु बने रहकर अपनी साधना के प्रति अर्पित होने के लिये प्रेरणा देती है। परन्तु जैन श्रमण का लक्ष्य केवल अपना कल्याण ही नहीं है। स्थानकवासी श्रमण के लिये, स्वयं उसका अपना अन्तिम लक्ष्य, अपने श्रावक-श्राविकाओं के कल्याण में ही जुड़ा हुआ है। यह बलवती भावना, स्थानकवासी श्रमण को, अपने श्रावक-श्राविकाओं के सुख-दुख, पतन-प्रगति आध्यात्मिक उन्नति और तप सभी समस्याओं की ओर अधिकाधिक ध्यान देने के लिये बाध्य करती है। यानि, जैन शास्त्र और धर्माचार के अनुसार, अत्यन्त निरपेक्ष और तटस्थ होने के बावजूद, स्थानकवासी श्रमण, अपने समाज के आध्यात्मिक उद्धार का व्रत लिये जागरूक पहरेदार है।

सो, जिन-जिन महाभाग स्थानकवासी श्रमणों में, ये विभूतियाँ, ये गुण एकत्र पाये जाते हैं, वे श्रमण-शिरोमणि, हमरे समाज के वन्दनीय ही नहीं, ऐतिहासिक रूप से भी गौरव के धनी हैं क्योंकि स्थानकवासी समाज की धार्मिक धुरी श्रमण ही हैं।

आनन्दरूप श्रमणवर श्री पुष्कर मुनिजी महाराज इसलिये और भी अधिक श्रद्धा जगाने वाले हैं क्योंकि उन्होंने अपने श्रावक संघ की बहुमुखी प्रगति की योजनाओं के लिये लगातार प्रेरणा दी है और धर्म को चारित्र, आचार व्यवहार और आचरण का शरीर प्रदान किया है। राजस्थान-केसरी की उपाधि उनके लिये अत्यन्त योग्य विरुद है क्योंकि स्थानकवासी समाज का राजस्थान राज्य में महत्व देखते हुए, वहाँ पूरे राज्य में एकमुखी श्रद्धा सम्पादन कर पाना केवल सुयोग्य और आचरण-शुद्ध श्रमणों के लिये ही सम्भव है।

कालयोग से, हर संस्था में ज्वार-भाटे की तरह उतार-चढ़ाव आते हैं और स्थानकवासी समाज की यह आदर्श संस्था—श्रमण संघ—भी इसका अपवाद नहीं। परन्तु इस संस्था की यह अनूठी विशिष्टता है कि हर तरह की विपरीत स्थितियों में भी यह आगे बढ़ने को रास्ता पा लेती है क्योंकि इसका सम्बल—आदर्श श्रमण—कभी चुकता नहीं। वर्तमान परिस्थितियों में भी, प्रातःस्मरणीय श्री पुष्कर मुनि की उपस्थिति, समस्त स्थानकवासी जैन समाज के लिये विश्वास और संतोष का बहुत बड़ा आधार है।

यह अभिनन्दन का आयोजन, समस्त स्थानकवासी समाज द्वारा अपनी इसी आस्थामय निश्चितता और आशामय आराधना का समर्पण है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org